Chap-8

अध्याय आठ

शिल्प – पक्ष

डॉ0 रामेश्वर लाल खण्डेलवाल 'तरुण' की काव्य–वस्तु में प्रथम किरण से लेकर 'यह लो मेरे हस्ताक्षर तक' सर्वत्र संप्रेक्षण–सक्षम शिल्प संयोजित है। वस्तु और रूप का घनिष्ठ सम्बन्ध है। काव्य की वस्तु भाव है और विचार और विचार भावों के सहचरी तत्त्व हैं। अमूर्त भावों और विचारो को मूर्तता रूप से प्राप्त होती है। रूप ही वह माध्यम है जो उन्हे रचनाकार से श्रोता या पाठक तक संप्रेक्षित करता है। संप्रेक्षण के इस माध्यम की संज्ञा कला के क्षेत्र मे शिल्प है। काव्य–वस्तु और शिल्प का सम्बन्ध लगभग वैसा ही है जैसा आत्मा और शरीर का है। इस सम्बन्ध की महत्ता एवं विशेषता तब प्रकट होती है जब शिल्प काव्य–वस्तु के सर्वथा अनुरूप होता है। काव्यानुरूप बनाने के लिए कवि काव्य–वस्तु की प्रकृति के अनुसार शिल्प में परिवर्तन करता रहता है। कवि द्वारा जीवन, प्रकृति और मनोजगत् की इसी शिल्पगत कलात्मक पुन. सृष्टि को कलात्मक सौन्दर्य कहते हैं डॉ0 'तरुण', जो स्वयं एक विख्यात समीक्षक–चिन्तक भी हैं, के अनुसार– ***" कलागत सौन्दर्य से अभिप्राय उस सौन्दर्य से है जो वस्तु–जगत् के पदार्थों, घटना–व्यापारों, व पात्रों आदि को कवि–कल्पना की सहायता से साहित्य में प्रस्तुत किए जाने पर भावक या पाठक–श्रोता के मन में उसकी ग्राहक–कल्पना के द्वारा उत्पन्न होता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि एक सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया से उत्पन्न होकर यह सौन्दर्य अत्यन्त प्रभावशाली होता हैं।"*** [1]

अभिप्राय यह है कि किसी काव्य के विश्लेषण–विवेचन के लिए उसके संवेदनात्मक पक्ष के साथ–साथ उसके अभिव्यजना–पक्ष की मीमासा भी अनिवार्य है। 'तरुण' के काव्य का मे कलागत सौन्दर्य का उद्घाटन एवं समीक्षण उसके अभिव्यक्ति–पक्ष के विवेचन–शैली– शिल्प विवेचन के अन्तर्गत ही समाहित हो जाएगा।

कवि 'तरुण' के काव्य मे शिल्प–पक्ष पर विचार करते हुए सर्वप्रथम हमारा ध्यान कवि की दो कविताओं की ओर जाता है। जिनमे कवि की इस सम्बन्ध में अपनी ही धारणाओं का परिचय मिलता है। इस सन्दर्भ मे 'तरुण' की पहली कविता है– मेरी कविता–

"न रहे, न रहे मेरी कविता–
तेज लपटों पर चढ़ी कढ़ाई में, मसालों में
तली छौंकी, फिर तली–छौंकी, सब्जी–सी,
नष्ट सारे हो चुके हों जिसके विटैमिन!
रहे मेरी कविता चट्टानी, गुलमुहरी,
हरहराते पहाड़ी झरने–सी!
चौड़े, खुले, नीले आकाश के नीचे!" [1]

दूसरी कविता है– 'देते हैं'। यद्यपि इस छोटी–सी कविता में कवि का मूल मन्तव्य तो समाज पर व्यंग्य करना ही है किन्तु इसी प्रक्रिया में उसकी अभिव्यक्ति विषयक धारणा अनायास ही व्यक्त हो जाती है–

" किसी का कुछ लेते तो नहीं–
– देते हैं।
अभिव्यक्ति का सुख लेते हैं।
अभिव्यक्ति–
कला–जीवन का सार–तत्व–
उस पर बंधन कैसा?" [2]

1 'हम शिल्पी सत्रास के' 'मेरी कविता', पृष्ठ 68
2 'आँधी और चॉदनी' 'देते हैं', पृष्ठ 13

इससे एक ओर जहाँ यह तथ्य स्पष्ट होता है कि अभिव्यक्ति पर कवि को किसी भी प्रकार का बंधन स्वीकार्य नहीं है और यह होना भी नहीं चाहिये क्योकि यह कला–जीवन का सार–सत्त्व है। वहाँ दूसरी ओर अभिव्यक्ति की कलात्मक–गरिमा को बनाये रखने की कवि की प्राथमिकता का सकेत भी मिलता है।

यह बात कवि की संवेदना के विषय में भी इतनी ही सत्य है जिसका उल्लेख यथा–स्थान किया जा चुका है। हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक के शब्द इस सन्दर्भ मे विशेष उल्लेखनीय है।– ***"रामेश्वर लाल खण्डेलवाल ने इन सभी काव्य–प्रवृतियों को विकसित होते देखा और इनके प्रवर्तक एवं उन्नायक कवियों की रचनाओं से एक सीमा तक प्रभाव भी ग्रहण किया। कवि 'तरुण' के मानस पर इन चार प्रवृत्तियों का प्रभाव अनुकरणात्मक शैली से न पड़कर चिन्तन और मनन पद्धति से पड़ा। छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और स्वच्छन्दतावाद को सभी पहलुओं से समझकर कवि 'तरुण' ने अपनी रचना धर्मिता को विकसित किया। उनका काव्य–कथ्य और काव्य–शिल्प इसी कारण से किसी एक वाद या शैली से जुड़ा न होकर स्वतन्त्र अस्तित्व रखता है।"*** [2]

हिन्दी काव्य में शिल्प/अभिव्यंजना के बदलते हुए प्रतिमानों के परिप्रेक्ष्य को दृष्टिगत करते हुए काव्य में अभिव्यक्ति के विभिन्न उपादानों के अन्तर्गत 'तरुण' के काव्य का संक्षिप्त विवेचन करते हुए उसमें निहित शिल्पगत सौन्दर्य का उद्‌घाटन यहाँ प्रस्तुत है।

गीतिमयता

समकालीन काव्य के शिल्प–पक्ष में गीति–तत्त्व पर अत्याधिक बल दिया गया है। काव्य में नीरसता की अपेक्षा गीतिमयता को अधिक रसमय और कर्णप्रिय माना गया है। एक प्रकृत और कुशल स्रष्टा होने के कारण 'तरुण' की कविताओं और गीतों में शब्द, ध्वनि, वर्ण सब अर्थ की दृष्टि से नप–तुल कर सूक्ष्म भावों के सफल व्यंजक बने है। लय और संगीत 'तरुण' की कविताओं मे सर्वत्र अन्त: स्यूत है। इसी कारण तुकान्त कविताएँ तो गेयता के निकष पर खरी उतरती हैं। अतुकांत रचनाओं में भी लय के साथ साथ अनेक स्थानो पर तुक का सुन्दर प्रयोग मिलता हैं।

डॉ0 हरिश्चन्द्र वर्मा के अनुसार, ***"इन गीतों में सबसे प्रमुख घटक हैं इनकी टेकें। ये टेक पक्तियाँ अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति को नियन्त्रित और निर्धारित करती हैं। अपने स्वातन्त्र्य–दर्शन की प्रस्तुति के लिए डॉ0 तरुण ने संकल्प, संघर्ष, शक्ति और मुक्ति के निरूपक उद्‌बोधन–गीत ही अधिक लिखें हैं। यह उल्लेखनीय है कि उद्‌बोधन–गीतों की टेंकें आकार में छोटी हैं तथा संकल्प और शक्ति के संदेश की वाहक होने के कारण उनकी लयें क्षिप्र हैं। यह भी ध्यातव्य है कि उद्‌बोधन–गीतों की टेके सम्बोधनात्मक हैं। संबोधन से अनुभूति की अभिव्यक्ति में लक्ष्यनिष्ठता आती है। संबोधन पद्धति के तीन रूप डॉ0 तरुण के गीतों में मिलते हैं। 'मांझी, साहस छोड़ न देना', 'तू अपने पथ पर बढ़ता चल', 'लौह पुरुष! तू रोता क्यों हैं', 'पंछी, पिंजरे के तोड़ द्वार' आदि गीतों में संबोधन का प्रयोग प्रारम्भ में किया गया है। 'जागरण का शंख गूँजा, जाग रे आत्मघाती', 'जाग मेरे जीवन की आग!', 'आओ मन–मंदिर के वासी' आदि टेकों में सम्बोधन को बाद में रखा गया है। तीसरे प्रकार सम्बोधन–पद्धति में सम्बोधन को मध्य में रखा गया है। 'गाता चल तू गीत माँझी, गाता चल तू गीत।' इसी प्रकार की टेक हैं। गहन अनुभूति के वाहक लम्बी लय वाले भक्ति–गीतों में भी संबोधन की उक्त तीनों पद्धतियों प्रयुक्त हुई हैं, यथा– (1) "देव, तुम्हारे श्री चरणों में फूल चढ़ाने आया मैं", (2) "आज तुम्हारी पूजा करने मैं मन्दिर में आई, नाथ।", (3) "आज तुम्हारे चरणों में प्रभु! दीपक नहीं जलाऊँगा मैं।" अधिकतर गीतों में टेक–पंक्ति इकहरी हैं, किन्तु कुछ भक्ति–गीतों में***

दुहरी टेक–पंक्तियाँ प्रयुक्त हैं अधिकतर भक्ति–गीतों में दुहरी टेक पंक्तियों के पश्चात् प्रथम टेक–पंक्ति को पुनः तीसरी पंक्ति के रूप में रखकर अनुभूति और लय के संयुक्त प्रभाव को सघन बनाया गया है। अपवादस्वरूप कुछ गीत ऐसे भी हैं जिनके प्रारम्भ में टेक–पंक्ति नहीं है। ये गीत अन्तरे से प्रारम्भ होते हैं। प्रत्येक अन्तरे के बाद सम–तुकान्त पंक्तियाँ प्रयुक्त हैं।

टेक की पंक्तियों में भाव–संघनन की अनेक पद्धतियाँ प्रयुक्त की गई हैं। कहीं विस्मयबोधक वाक्य–रचना है, तो कहीं प्रश्नात्मक। कुछ टेकों की निर्मिति सादृश्य योजना द्वारा हुई है, यथा– मैंने गीत प्रदीप जलाये। ऐसी टेकों में प्रयुक्त रूपक का पूरे गीत की संरचना पर प्रभाव दिखाई पड़ता है, जिससे गीत के कलेवर में भाव–संघनन की सिद्धि होती है। उपर्युक्त गीत में भाव–संघनन का उत्कृष्ट निदर्शन मिलता है। 'चाँद से हौले–हौले चलो', 'तुम मेरे साथी होते तो जीवन नन्दन वन बन जाता', 'तूफ़ानी जीवन–सागर में साथ–साथ तैरे प्रिय, हम–तुम' आदि गीतों में टेक में प्रयुक्त सादृश्य–योजना ने पूरे गीत को भावात्मक अन्विति प्रदान की है। टेकों में शब्दों और पदबन्धों की आवृत्तिं द्वारा भी भाव–संघनन की प्रक्रिया सम्पन्न की गई है। 'चाँद–से हौले–हौले चलो', 'आओ, रंगिणी आओ, जीवन में आओ', 'सबका अपना–अपना मन है' आदि टेकों में शब्दों की आवृत्ति द्वारा रागात्मक प्रभाव में अभिवृद्धि की गई है। 'मुझे बुला रहा गगन– कि आ यहाँ, कि आ यहाँ, कि आ यहाँ' में संज्ञा पदबन्ध की तथा 'नव प्रभात आया–आया रे' में क्रिया–पदबन्ध की आवृत्ति द्वारा भाव और लय के संयुक्त प्रभाव को सघन बनाया गया है। 'बरस रहा है प्यार तुम्हारा, बरस रहा है प्यार', 'निर्माण कर, निर्माण कर', 'हरि आयेंगे, हरि आऐंगें' आदि टेकों में वाक्यों की आवृति द्वारा प्रभाव में वृद्धि की गयी हे। 'जाग, मेरे जीवन की आग', 'कैसे सुन्दर लगते हैं ये माटी के घर' आदि टेकों में तुकांत शब्दों की योजना द्वारा प्रभाव में वृद्धि की गई हैं।" [3]

कवि 'तरुण' के गीतों का जन्म अन्तर्वेदना से हुआ है, उनके गीतों में आवेग का तार बना रहा है, चिन्तन या अलंकरण उनके गीतों में कहीं भी अवरोध नहीं हुए हैं। 'एक दिन' में वेदना की अभिव्यक्ति भी गीतों के माध्यम से की हैं–

"एक दिन मिट जाऊँगा, आह–
हृदय में लेकर व्यथा अशेष।
पड़ी रह जायेगी कुछ काल
करुण यों स्मृतियां मेरी शेष–" [1]

अनुभूति की तीव्रता और सत्यता गीतिकाव्य के लिए अनिवार्य एवं आवश्यक हैं। कवि 'तरुण' के काव्य से गीत अनुभूति की सत्यता और तीव्रता के कारण अत्यन्त मार्मिक ढंग से व्यक्त हुए है। इन गीतों में कवि के मन की वेदना साकार हो उठी है और पाठक को स्व–अनुभूति में निमग्न करते हैं–

"कोई हम को लाकर दे विष का प्याला–
जिसमें उठती हो लाल धधकती ज्वाला!" [2]

गीतो के लिए भाव–ऐक्य अत्यन्त आवश्यक तत्त्व हैं। कवि 'तरुण' इस दृष्टि से सफल हैं। उनके सभी गीतो में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक एक ही भाव अनुस्यूत है। गीतकार के गीतो में भावों, पीडाओ का संयम होता है। 'तरुण' के काव्य में यह संयम और काव्य–नियन्त्रण सर्वत्र है–

---

1 'हिमाचला' 'एक दिन', पृष्ठ 65
2 वही, 'मर्म भरी पीडा में' पृष्ठ 63

"मेरा होता राज, जहाँ तक खिंची क्षितिज की रेखा।
घने जंगलों में से जाता सिर पर रखकर बोझा,
बैठ बजाता मैं झरनों के तीर कहीं अलगोजा,
डाल तरकशी चट्टानों पर, कहीं पड़ा मैं सोता।" [1]

संगीत–तत्त्व की दृष्टि से भी कवि 'तरुण' का काव्य अत्यन्त मधुर है। उनके गीतो मे प्रकृत प्रवाह और गीतों की भाषा में लोच है। शब्दों का चयन भी गीतों की दृष्टि से किया गया है। शब्द–मैत्री के द्वारा गीतिमयता का अपने काव्य में समावेश कवि 'तरुण' ने किया है–

"रूप का बल सह न पायेगी
सुकोमल कंचना काया–
कि जिसमें ज्वार जोबन का
बिना तिथि– वार भर आया।" [2]

कवि 'तरुण' के काव्य में गीतों की लय, सुरों का आरोह–अवरोह पाठक की हृद्‌यतन्त्री को झंकृत कर देता है। इस गीतों में सर्वत्र मस्ती का आलम है। भाव भी मदिर है और उनमें लय भी मादक हैं कवि का मधुरतम आत्मद्रव, उसके जीवन की ज्योत्सना तथा उसके हृदय का उल्लास ही गीतों मे अभिव्यक्त हुआ है।

भाषा–सौन्दर्य

भाषा ही भावों को मूर्त रूप प्रदान करती है जिससे कविता के स्वरूप का निर्माण होता है। इस दृष्टि से काव्याभिव्यक्ति का मूल उपकारण भाषा ही है। और भाषा की मूल इकाई हैं– शब्द। शब्द के विषय में कवि 'तरुण' के विचार यहाँ उल्लेखनीय हैं– ***"कवि का अपना परम विश्वसनीय संबल अथवा कविता का सबसे मौलिक व प्राथमिक उपादान– 'शब्द' ही तो है। शब्द– जिसमें ऊँचे व गंभीर प्राणपोषक अर्थ और अतलान्त आशय से भरे रहते हैं। स्वच्छ, निष्कलुष व कांतिमान शब्द की कल्पना, तलाश या खोज सर्जनात्मक कवि–चेतना का वस्तुतः परम पुरुषार्थ हैं।"*** [4]

'तरुण' के काव्य की भाषा खडी बोली है। उसमे स्वच्छता, निष्कलुषता और कांति– ये तीनो गुण सर्वत्र विद्यमान हैं जो कि कवि चेतना के परिष्कार और प्रौढता के प्रतीक हैं। चाहे किसी भी भाव की अभिव्यक्ति हो, 'तरुण' के काव्य की भाषा ने अपना सन्तुलन और संयम नही खोया है। प्रेम और सौन्दर्य के उद्‌घाटन तथा प्रेरक–भावो मे रोमांच, ऐन्द्रियता, मादकता और मासलता के अतिरेक तथा नारी सौन्दर्य को पूरी तरह विवृत करके, उसका भरपूर आनन्द लेने के क्षणों में भी कवि की भाषा, सात्विकता और संयम से स्खलित नही हुई है। उसमे निष्कलुषता तथा वासना की कोई गध नही मिलती, न तो कवि की संवेदना मे और न ही प्रमाता के संवेदन मे। इस सन्दर्भ मे एक बानगी देखिए–

"मैं बना करधनी तारों की पहनाऊँ–
तुम पौढ़ चाँद पर, शिथिल–वसन अलसाओ।
सखि, फूल खिले बेला के, तुम मुसकाओ!" [3]

इस सन्दर्भ मे कवि की अनेक कविताएँ भी महत्त्वपूर्ण है जिनमें 'मुख–छवि', 'बडरी अखियॉ', 'तुम मेरे साथी होते

1 'हम शिल्पी सत्रास के' · 'मैं बनवासी होता', पृष्ठ 70
2 'ऑधी और चॉदनी' 'कन्याकुमारी का समुद्र', पृष्ठ 33
3 वही, 'फूल खिले बेला के', पृष्ठ 105

तो–', 'हम तुम कहीं चल दें', 'तुफानी जीवन सागर में', 'फूल खिले बेला के', 'पा प्यार तुम्हारा ही रानी', 'सुकुमारि, उठाओ अवगुण्ठन', 'प्राण, तुम मेरे हृदय में', 'जब गया ध्यान तुम्हारा धर', 'ग्रामंचलों की गोरी', 'सरला', 'नारी–तू है कौन', 'दुहरा दो फिर वह एक रात', 'आई याद तुम्हारी', 'क्या उपहार तुम्हें तुम्हे दूँ, रानी' और 'ग्राम–किशोरी खेत निराती' आदि– विशेष उल्लेखनीय हैं।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के शब्दों में कवि 'तरुण' की भाषा के विषय में इस प्रकार कहा जा सकता है– ***"उसकी (डॉ0 'तरुण' के कवि की) वाणी खूब सधी हुई और मधुर है,... ।"*** [5]

इसी सम्बन्ध में कवि सुमित्रानन्दन पंत की टिप्पणी भी विशेष उल्लेखनीय है– ***कवि (डॉ0 'तरुण') की भाषा में एक स्वच्छ संयम मिलता है, उसका प्रवाह निश्चय ही काव्यमय है। छन्दों में गति तथा जीवन है।"*** [6]

कवि 'तरुण' की भाषा मे कृत्रिम साज–सज्जा का प्रयास नहीं है। भाषा में प्रसाद गुण तो सम्पूर्ण काव्य में व्याप्त है, कोमल भावों को व्यक्त करते समय कवि 'तरुण' ने अपने काव्य में माधुर्यगुण–सम्पन्न भाषा और कोमलकांत पदावली का उपयोग किया है–

"मद–भरे उजले रतनारे,
मीन–से चंचल कजरारे,
सीप–से चौड़े, अनियारे–
नयन में रस लहराता है।" [1]

कवि ने सूक्ष्म और कोमल भावों को अभिव्यक्त करने के लिए कोमल वर्णों, ह्रस्व ध्वनियों और छोटे छन्दों का प्रयोग किया है। एक उदाहरण और देखिए–

"करुणा की कोमल काया है।
ताजमहल इसकी छाया है।
युग–युग से बहता आया है।
इसकी नींव बनाकर ही तो विधि का यह संसार बना है।
यह आँसू रसमय कितना है।" [2]

'तरुण' की 'उसकी जय हो', 'दान', 'याचना', 'मनुहार', 'ज्योतिर्मय को', 'दो चिडियाँ', 'जीवन', 'तुमने न अभी देखा जीवन', 'वचना', 'आँसू', 'उदासी', 'किसने बजाई बसरी', 'अपनी कहो कहानी', 'मोती का–सा मन टूट गया', 'इस पीडा का उपचार न कर', 'वह कथा सुन कर क्या करोगे', 'वे सुन्दर–से दिन बीत गये', 'मर्म–भरी पीडा में', 'चमक रहे अम्बर में तारें', 'कितनी मधुर वह रात थी', 'कौन–कभी', 'मधु–भार', 'मुझको एकाकी गाने दो', 'हरी घास', 'स्वप्न–काया' आदि कविताओं में इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग हुआ है।

कोमल भावो के लिए कोमल भाषा, तो पौरुषवान्, सशक्त, स्थूल और गंभीर भावों की अभिव्यक्ति के लिए कठोर वर्णों, दीर्घ, महाप्राण, ध्वनियो तथा संयुक्त वर्णों और बडे छन्दों का उपयोग हुआ है जो उसके काव्य को उदात्त, विशद और व्यापक फलक प्रदान करते हैं–

"ए श्याम–नील गर्जनकारी चंचल दिगन्त–व्यापी समुद्र!
इस निर्जन में क्यों गरज रहे धारण कर ऐसा रूप रुद्र!

---

1 'हिमाचला' 'मुख–छवि', पृष्ठ 55
2 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'आँसू', पृष्ठ 120

इस महानील नभ के नीचे निशि–दिन तुम हे जलनिधि अपार,
क्यों करते हाहाकार विपुल अन्तर्पीड़ा का लिए भार?" [1]

विद्रोह और आक्रोश विषयक, युग सत्रास विषयक लगभग सभी कविताओं– 'आकाश का निमंत्रण', 'हिमालय के प्रथम दर्शन', 'कन्याकुमारी का समुद्र', 'मरु का चन्द्रोदय', 'निर्झर', 'मातृभूमि के श्री–चरणों में', 'प्रजातन्त्र भारत', 'सांस्कृतिक अभिनन्दन', 'महाराष्ट्र केसरी 'तिलक' के प्रति', 'विश्व–फलवारी', 'जवाहर के निधन पर', 'हम ऐसे नगर के निवासी', 'भली–भाँति जानता हूँ', 'युगनद्ध होने', 'अंधडों में छोड दो– अकेला', 'हथौडा चाहिए, तोडो चट्टान', 'प्रश्नाकुल हूँ' आदि में इसी प्रकार की भाषा परिलक्षित होती है।

इसी प्रकार उद्बोधन तथा ओजपूर्ण भावाभिव्यक्ति के लिए भाषा का भी ओजपूर्ण हो जाना अत्यन्त सहज ही लगता है–

"तुझको देखने, हे वीर!
उमड़ा सिन्धु का सब नीर!
तेरा देख साहस–कोष,
फैला आँधियों में रोष!
तुझसे सिन्धु को भी डाह " [2]

इसी प्रकार की अन्य कविताओ में ऐसी ही ओजपूर्ण भाषा देखने को मिलती है जिनमे कुछ इस प्रकार है– 'संघर्ष पथ पर', 'सघर्ष कर', 'तू अपने पथ पर बढता चल', 'गाता चल तू गीत', 'माझी, साहस छोड न देना', 'ओ चट्टान–से मल्लाह', 'यों, काम नही चलता जग में', 'लौह पुरुष, तू रोता क्यों हैं', 'बटोही, ठण्डी सॉस न ले', 'पंछी, पिंजरे के तोड द्वार', 'जवानी आ गई मेरी', 'गीत–भरा हो मेरा जीवन', 'जाग, मेरे जीवन की आग', 'आश्वासन', 'उद्दीप्त', 'नव चेतना', 'आकाश का निमन्त्रण', 'नव–शक्ति' और 'मेरी गति' इत्यादि।

जीवन और समाज की विसगतियों और विद्रूपताओ को विवृत करते हुए कवि की भाषा व्यंग्य–प्रधान, तल्ख, तीखी और चुभने वाली हो गई है। यथा–

"सृष्टि मिली– सुअरों का बाड़ा
आदमी–ख़ून की पौ में तैरता, पड़ा पाड़ा!
ध्रुव से ध्रुव तक धुआँ और लपट,
लाल आँखें, हुंकार, चिंघाड़, चुनौती और डपट।" [3]

इसी प्रकार आज के मनुष्य के लिए 'संत्रास के शिल्पी', 'क्रूरकर्मा', 'हर क्षण अपने ही विनाश की कला में जुटे हुए', 'पोले और ठूँठे बॉस के वंशज', 'चिर–मरणातुर' और 'बघनखे' आदि तल्ख शब्दावली का प्रयोग किया है। आदमी को 'आड़े–टेढे–फेंक–दिये–गये अनादि बीज की कोई ऊल–जलूल उपज', 'छिपकली की ताजी–कटी असहाय तड़पडाती पूँछ' तक कहा गया है। 'कबाडखाने का लौह–लक्कड', 'रिजेक्टेड' तथा 'वेस्ट–पेपर बास्केट मे फाड़ कर फेंक दिया गया रद्दी के टुकडे–सा'– ये सब आदमी के लिए प्रयुक्त किये गये विशेषण कवि की व्यंग्य–प्रधान भाषा के उदाहरण हैं जो भाषागत तीक्ष्णता के लिए हुए भी कथ्य और संम्प्रेषणीयता की दृष्टि से अत्यन्त सही बन पड़े हैं।

इस प्रकार की तल्ख भाषा के अनेक व्यंग्य–प्रधान कविताओं में देखी जा सकती है जिनमें से 'हम शिल्पी संत्रास के',

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'शक्ति का सौन्दर्य–स्वप्न', पृष्ठ 202
2 वही, 'ओ, चट्टान से मल्लाह', पृष्ठ 80
3 'हम शिल्पी सत्रास के' 'धोखा हुआ', पृष्ठ 80

'हम जीते तो हैं', 'आदमी', 'नव आदमी', 'आदमी का रक्त', 'जीवन–पतग', 'सांस्कृतिक योगदान', 'मानव–सस्कृति : मेडिकल चेक–अप', 'आस्था–टूटी', 'आज, मेरी नजर', 'मेरी ये ऑखें', 'धोखा हुआ', 'सूरज–था कभी', 'बीज वह–अनादि', 'रेल की खिड़की से', 'चोंचों का खेल', 'नव आदमी', 'आदमी', 'मानव–ज्वर', 'सॉप आवास–समस्या', 'कैमरा' और 'एकेडेमिक' आदि प्रमुख है।

कवि 'तरुण' की भाषा केवल अभिव्यक्ति का साधन ही नही बल्कि कवि ने उसके माध्यम से विवेच्य चेतन पदार्थों की आवाज, चित्र सभी कुछ स्पष्ट कर दिए है। 'चिडिया' कविता मे कवि की भाषा, शब्दों मे ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता दर्शनीय होने के साथ–साथ समकालीनता के अनुरूप सरल एवं सम्प्रेषणीय है–

"देखों, करती चीं–चीं–ची–च्वट्–
लगा रही हैं सब मिलकर रट,
अर्र्रर, यह क्या हुआ अचानक,
पलक मारने में लो झटपट–
फुरफुर, फुरर फुरर कर नभ में दल की दल उड़ गई सकल!
खेल रहीं चिड़ियाँ चंचल!" [1]

डॉ0 रघुवीर शरण 'व्यथित' के अनुसार – ***"डॉ0 'तरुण' उच्च शिक्षित मध्यवर्गीय जन की सुशिष्ट भाषा का व्यवहार करते हैं। भदेस, गँवारू और च्युत संस्कृति शब्द या मुहावरों को वह हाथ नहीं लगाते। उनकी भाषा में व्यवहार में चलते अंग्रेजी शब्दों का भी अपनी अर्थ–छवियों के विस्तार के साथ सहज प्रयोग है, उन शब्दों का जो हिन्दी में (शहरी शिक्षित वर्ग में विशेषतया) रचपच गये हैं।"*** [7]

डॉ0 जगदीश चन्द्र सिंहल के अनुसार– ***"विगत साठ वर्ष से काव्य–साधना करने वाले कविवर 'तरुण' की भाषा भी अत्यन्त प्रौढ़, परिष्कृत और भावानुकूल अभिव्यक्ति की परिचायक हो गई है। काव्यशास्त्रीय दृष्टि से 'तरुण' काव्य की भाषा का विवेचन करना न तो यहाँ संभव है और न ही समीचीन। हमारे विचार में कविवर 'तरुण' की भाषा को तो एक ही नाम दिया जा सकता है, और वह है "भोगे हुए तीव्र यथार्थ को अभिव्यक्त करने वाली सान चढ़ी भाषा।" भाषा पर विद्वान कवि का असाधारण अधिकार हैं। सचमुच में वे भाषा के डिक्टेटर हैं। भावानुकूल शब्द चयन की उनकी क्षमता बेजोड़ हैं। शब्द चयन का फलक भी अत्यन्त विस्तृत हैं। मार्मिक और व्यंजनात्मक प्रयोगों के लिए उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी के साथ–साथ अंग्रेजी, फारसी, उर्दू शब्दों का सार्थक और प्रभावी प्रयोग करके भाषा सम्बन्धी अपने उदार दृष्टिकोण का परिचय दिया है। आँचलिक शब्दों और मुहावरों के प्रयोगों से उनकी भाषा में सरलता, स्वाभाविकता, चित्रात्मकता और नाटकीयता जैसे गुण सहज ही आ गये हैं। कवि का बिम्ब और प्रतीक–विधान अनूठा है। मार्मिक स्थलों का चयन और उन्हें प्रस्तुत करने में सरस शैली का प्रयोग 'तरुण'– काव्य की भाषा का महत्त्वपूर्ण गुण है। छन्द–विधान की दृष्टि से कविवर 'तरुण' की प्रारम्भिक कविताएँ तुकान्त और लययुक्त हैं, परन्तु जैसे जैसे कवि गलित–सड़ित परम्पराओं और व्यवस्थाओं को तोड़कर चिंतन के नवीन क्षेत्र में प्रवेश करता है, वैसे–वैसे उनका छन्द–विधान भी अपने सभी बंधनों से मुक्त होकर अतुकांत होता चला गया है। काव्य–सौष्ठव की दृष्टि से 'तरुण' काव्य की निम्नलिखित रचनाएँ दृष्टव्य हैं–***

1. सादृश्यमूलक अलंकारों उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा तथा अनुप्रास का सफल प्रयोग।

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'चिडियॉ', पृष्ठ 209

2. *लोक चेतना से जुड़े प्रतीक और बिम्ब–विधान।*

3. *माधुर्य, ओज और प्रसाद– तीनों गुणों से मंडित काव्य–रचनाएँ।*

4. *सपाट बयानी के लिए कबीर जैसी सपाट शब्दावली–*

"बनी रहे यह घास–फूस की अपनी राम मड़ैया,
संतो, अपनी राम मड़ैया
किसका यहाँ अमर पट्टा है, किसी यहाँ जगीरी?
अमरनाथ की पगडंडी पर कटनी– एक दुपहरी।
उड़ जायेगी कहीं हवा में घास–फूस की टपरी,
थोड़ी देर साथ है भैया, फिर सब चिरी–चिरैया।"

(त० का० ग्र०, पृष्ठ 401)

'तरुण' काव्य ग्रन्थावली' में ऐसे अनेक अंश मिल जायेंगें जिनकी तुलना कबीर की ललकार भ्री वाणी से की जा सकती है। उन काव्यांशों को पढ़कर ऐसा लगता है मानों कोई आधुनिक कबीर मुराड़ा हाथ में लेकर कह रहा हो– 'जो घर फूँके आपना वो चले हमारे साथ'। कबीर जैसा ओज, वही ललकार और वैसी ही कथनी और वैसी ही करनी।

5. *व्यंग्य–प्रधान भाषा–*

"सुबह–पीला/दोपहर–नीला/शाम को–लाल/ और रात को श्याम/
–गिरगिटिया हो गया है अब तो आदमी तमाम"

(त० का० ग्र०, पृष्ठ 6)

6. *भाषा में ध्वन्यात्मकता और काव्य की संप्रेषणीयता की दृष्टि से कवि को अद्‌भुत सफलता मिली है।*

7. *'तरुण' काव्य ग्रन्थावली में गीति–रचनाओं की सृष्टि अपनी संगीतात्मकता, अनुभूति की तीव्रता और रसमय वैयक्तिकता की गहरी छाप पाठकों पर छोड़ती है।*

8. *शृंगार, वीर, करुण और वात्सल्य रसों की प्रधानता है। 'प्राण–ज्योति और जीवनोल्लास' शीर्षक के अन्तर्गत आने वाली कविताओं में एक नये रस ('तरुण रस' कहना चाहूंगा) की अनुभूति होती है।"* [8]

इस प्रकार 'तरुण' की भाषा उनके काव्य सौष्ठव की गरिमा के अनुरूप है।

शब्द योजना

हिन्दी में द्विवेद्वी–युग से ही कविता के महत्त्व को पहचान लिया गया था। कविता की पंक्तियों में शब्दों का समायोजन इस प्रकार किया जाय कि वे– सभी परस्पर एक दूसरे की गरिमा का संवर्द्धन करने में सहायक हों अथवा परस्पर सापेक्ष हों तो इससे कवि अपनी कविता में अर्थ–गाम्भीर्य, समहार–शक्ति, प्रांजलता तथा प्रभविष्णुता जैसे गुण उत्पन्न करने में सफल हो जाता है। 'तरुण' की कविताओं मे शब्दों की इसी सापेक्षता का सफल निर्वाह हुआ है। 'यह लो मेरे हस्ताक्षर' शीर्षक कविता से एक उदाहरण के द्वारा यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है–

"चारों ओर के पहाड़ों से
हरहराती–दहाड़ती–उतरती,
आवर्तो–विवर्तो में फुंकारती,
ताबड़तोड़, प्रमदा, मटमैली जलधाराओं का

रोर–भरा गर्जन–तर्जनमय यह संगम–संघर्ष ही मुझे प्रिय है–" [1]

'तरुण' ने अपनी भावाभिव्यक्ति में शब्दों के अत्यन्त प्रभावी और सशक्त स्वरूपों को ही चुना है जिससे उनके काव्य में प्रभविष्णुता, प्रभावोत्पादकता तथा सशक्त भाव–व्यंजना के गुण सर्वत्र विद्यमान है। शब्द–चुनाव करते समय एक ओर जहाँ मृदु, कोमल, सूक्ष्म और गंभीर भावो के लिए संस्कृतनिष्ठ, तत्सम शब्दों और खडी बोली, तद्भव शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है, वहाँ दूसरी ओर आधुनिक जीवन में वैज्ञानिक और यांत्रिक विकास के फलस्वरूप उपजी जीवन की विडम्बनाओ, विसंगतियों, युग–संत्रास, विद्रोह और आक्रोश की अभिव्यक्ति में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है, जैसे–सेक्स, सेक्रेटेरिएट, माडर्न साइकोलाजी का रॉ मैटिरियल, लीडर, डिप्लोमेट, एकेडेमिक, एकेमेडिशियन आदि के शब्दों का भी प्रयोग है। कहीं–कही उर्दू ग्राम्य बोलचाल के शब्दों का भी खुलकर प्रयोग किया गया है जैसे ऊँची आसामी, मातबर हस्ती आदि। 'तरुण' के काव्य में इस प्रकार के बोलचाल के अनेक शब्द देखने को मिलते हैं जिनमें कुछ इस प्रकार हैं– टपरी, काकू, भूआ, भलैया, छोर–छोरियॉ, नावॉ, मंदरे, डरपे, गोरटी, दूबरी–दूबरी, बादरे, पिया, टिमकता, बालम, चुमार, मिदुराए, निंदियारी, छॉव, ब्यालू, दाब, पिन्हाता, माटी, लल्ले, खिर गई, उकस इत्यादि,इत्यादि।

इसके अतिरिक्त, राजस्थानी बोली की पूरी पंक्तियॉ जैसे– एक डाल दो पंछी रे बेठ्या कुणै गुरु कुण चेला' जैसे लोक–गीतों से ली गई भाषा भी 'तरुण' के काव्य में मिलती है। 'चॉंद और चॉदनी' शीर्षक कविता में बंगला बोली के शब्द – 'की बोले मॉ तुमि अबले' – भी प्रयुक्त हुए है। इन शब्दों ने कविता मे संसदीय प्रणाली पर किए गये व्यंग्य को और अधिक मुखर और करारा बना दिया है।

कवि ने शब्दों का यह विविध–प्रयोग फैशन अथवा आधुनिकता आदि किसी पूर्वाग्रह के कारण नही किया, अपितु भावों की सम्प्रेषणीयता, स्पष्टता, अभिव्यजना की सशक्तता तथा प्रभावोत्पादकता आदि की अनिवार्यता के रूप में सहज और स्वाभाविक रूप से अनायास ही अभिव्यक्ति के वेग में ये शब्द सम्मिलित हो गये हैं।

स्पष्ट है कि 'तरुण' ने अपनी काव्याभिव्यक्ति को अधिक प्रभावी बनाने के लिए अत्यन्त उपयुक्त और सटीक शब्दों का चुनाव किया है। चाहे उनका स्रोत कैसा भी रहा हो। कवि अपने इस प्रयोग मे सफल भी रहा है। डॉ0 गंगाधर झा के शब्दो में कहा जा सकता है– ***"छायावाद की परिमार्जित शब्दावली में हिन्दी–अंग्रेजी–उर्दू के कई प्रचलित शब्दों को गूँथ देने में उन्होंने अद्भुत निपुणता दिखाई हैं।"*** [9]

भाव–व्यजना मे अनेक प्रकार की ध्वनियों के समावेश से 'तरुण' की कविता–कामिनी के पैरों में घुंघरू अथवा पायल–सी बजने की अनुभूति होती है। अनेक स्थानो पर तो ध्वनिपरक शब्द ही गढ लिए गये हैं जो उसे अत्यन्त रमणीय स्वरूप मे प्रदान करते है।

अभिव्यंजना के अन्य उपादान

भाव–व्यंजना और सत्य की स्पष्ट–बोध–क्षमता होने के कारण मुहावरे, लोकोक्तियॉ और सूक्तियॉ समाज में प्रचलित हो जाते हैं। समय के अन्तराल मे उन्हे भाषा के ही अग के रूप मे स्वीकार कर लिया जाता है। काव्य में इनके प्रयोग से कवि की समाहार–शक्ति मे सवृद्धि होती है तथा भाव–व्यजना का स्वरूप प्रांजल हो उठता है। इसके अतिरिक्त, कुछ ऐसे शब्द–समूह या पक्तियॉ भी समाज मे प्रचलित हो जाती है जो सामान्यत किसी विशेष अर्थ–सन्दर्भ के समाहार रूप मे स्पष्ट बोध के लिए पूर्णतया सक्षम होती हैं। इसी प्रकार किसी कवि अथवा सिनेमा के गीत चिर–परिचित पक्तियों का प्रयोग भी सामान्य रूप में प्रचलित हो जाता हैं।

---

1 'ऑधी और चॉदनी' 'यह लो मेरे हस्ताक्षर', पृष्ठ 26

'तरुण' ने ऐसे अनेक मुहावरो, लोकोक्तियों, सूक्तियों और प्रचलित शब्द–समूहों का प्रयोग खुलकर किया है जिससे उनके काव्य की भाषा की समाहार–शक्ति मे संवर्द्धन होकर भावों की सम्प्रेषणीयता को समुचित गति मिली है। 'तरुण' के काव्य में उपलब्ध अभिव्यंजना के इन उपादानों मे से कुछ इस प्रकार है–

क 'बासी बचे, न कुत्ता खावे',

ख. 'वाह रे समय–वैद– तेरी मरहम',

ग. 'उसमें भी तो कुछ पानी हैं',

घ. 'मियॉ–बीवी राजी– तो क्या करेगा काजी',

ङ. 'पौ–बारह',

च. 'पॉचो उॅगली घी में',

छ. 'सीना–जोरी'(सभी मुहावरे),

ज. 'श्यामा का नखदान मनोहर' (प्रसाद),

झ 'हो चाहति छॉह' (बिहारी),

ञ. 'पूरे बाट परे सरकावे, बेगा–बेगा बोले' (कबीर),

ट 'ऑखे ही ऑखों मे इशारा हो गया' (सिनेमा गीत),

ठ 'जीओ और जीने दो' (महावीर),

ड 'सत्ता के घर सत्य कहार बन कर पानी भरता है' (लोकोक्ति),

ढ एक डाल दो पछी रे बेठ्या कुणै गुरु कुण चेला' (राजस्थानी),

ण 'की बोले मॉ तुमि अबले' (बंगला भाषा की पक्ति),

त 'मुहूर्त ज्वलित श्रेयों न च धूमायितं चिरम्',

थ 'माता भूमिः पुत्रों अहं पृथिव्या' (ऋग्वेद),

द 'सत्यमेव जयते नानृतम्',

ध 'अमृतस्य पुत्र' – मानव' (सस्कृत) आदि।

निश्चय ही अभिव्यक्ति के इन नूतन उपादानों का मौलिक प्रयोग भाषा और कथ्य के स्पष्ट–बोध में विशेष सहायक होकर 'तरुण' के काव्य को प्रांजलता और प्रभविष्णुता प्रदान करता है। इससे यह स्पष्ट है कि बदले हुए परिवेश को मूर्तिमान करने के लिए तदनुरूप प्रचलित भाषा के प्रयोग की आवश्यकता युग–यथार्थ की अनिवार्यता हैं। नये–नये शब्दों के प्रयोग व लाक्षणिक प्रयोगों की सघनता शिल्प के वे गुण है जो इस कवि के काव्य की ऊँचाई और श्रेष्ठता को स्थापित करते है।

छन्द योजना

'तरुण' के काव्य में सन 1930 से लेकर 1950 तक तुकांत छन्द का ही प्रयोग मिलता है। उनकी प्रथम अतुकांत–स्वच्छन्द– 'स्मृति' शीर्षक कविता सन् 1950 मे लिखी गई। तदन्तर कवि ने तुकान्त और मुक्त छन्द–दोनों को अपनी रचनाओं में

समानान्तर और समुचित रूप मे स्थान दिया। तुकात छन्दो के सम्बन्ध में कवि ने किसी शास्त्रीय बन्धन को नहीं माना, अपितु अनेक प्रकार के शास्त्रीय, प्रचलित और लोक–जीवन के छन्दों को आवश्यकतानुसार आकार प्रदान करके नवीन और मौलिक छन्दों के द्वारा अपने भावों को अभिव्यक्ति दी है। इनमे तुक–ताल, वर्ण मात्राओं तथा यति और गति का निर्वाह अत्यन्त सफल और सुन्दर रूप में हुआ हैं। उन्होंने सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति के लिए छोटी–छोटी पंक्तियो के छोटे छन्द तथा विराट और व्यापक भाव–भूमि को अभिव्यक्त करने के लिए बडी पंक्तियों के बडे छन्दों का प्रयोग किया गया है।

'तरुण' ने छन्द के चुनाव मे शास्त्र और परम्परा का अनुसरण न करके गीत और संगीत का विशेष ध्यान रखा है–

"सुबह – पीला
दोपहर – नीला
शाम को – लाल
और, रात को श्याम
–गिरगिटिया हो गया है अब तो आदमी तमाम।" [1]

उनके काव्य मे परम्परागत छन्दों और स्वनिर्मित छन्दों के उदाहरण मिलते हैं। उन्होंने तीन पंक्तियॉ अथवा चार पंक्तियॉ रखकर कई छन्दों का निर्माण किया है–

"तू मुझे बहुत लगती प्यारी,
तू बड़ी सरल, हे सुकुमारी,
बलिहारी तेरी बलिहारी,
मैं निश्चल मन का हूँ किंकर, मैं सरल हृदय का सदा दास,
ऐ, शैल–तटी की हरी घास!" [2]

ग्राम–गीतों की धुने, लय और कही–कही शब्द लेकर उन्होने अपने काव्य में नवीन कलात्मक प्राण फूंक दिये हैं। 'प्रथम किरण' की 'सावन' कविता में लोक–संगीत और लोक–धुन का प्रयोग उसे अतिरिक्त मार्मिकता, सौन्दर्यात्मकता प्रदान करता है–

"बजा रहा है मधुर बाँसुरी, तान छेड़ मतवाली सी,
पीछे–पीछे चली आ रही लाल ओढ़नी वाली सी...," [3]

मार्मिक गीतों के स्थान पर जहॉ तीव्र, व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति की गई है, वहॉ भी मुक्त छन्द विधान कवि 'तरुण' के काव्य में सफलतापूर्वक नियोजित हैं–

"पर, जीवन ज्योति का प्रचण्ड अनादि स्रोत, चिर जवलन्त
दब्बू निर्वीर्य होकर चुपचाप बैठ जावे–हा हन्त।
सच्चा हो तो अधर्म, अन्याय की सृष्टि को भून दे।
अन्धकार बढ़ता जा रहा है–क्यों न रे " [4]

समकालीन विद्रूपताओं, विसंगतियों पर व्यंग्य करने के लिए मुक्त छन्द को एक शस्त्र के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। छन्दों के गतिशीलता के कारण 'तरुण' की कविताओं में कहीं भी शिथिलता नहीं आई है। 'मखमली थैला' कविता में सत्ता पर व्यग्य करते हुए कवि 'तरुण' ने इसका सही रूप स्वीकार किया है–

1 'हम शिल्पी सत्रास के' . 'आदमी का रक्त', पृष्ठ 76
2 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'हरी घास', पृष्ठ 181
3 वही, 'सावन', पृष्ठ 185.
4 'हम शिल्पी सत्रास के' 'सूरज–था कभी', पृष्ठ 88

"तीखा, नुकीला, आँखदार, धारदार, मोची वाला सुआ–
जूता गाँठने का –
अंतड़ियाँ जिससे खिंच आवें।
मालपुआ खाओगे
या
अँतड़ियाँ खिंचवाओगे?" [1]

डॉ0 रामकुमार शर्मा के अनुसार *"दो छोटी–छोटी पंक्तियों के, चार छोटी–छोटी पंक्तियों के, छः और आठ छोटी–छोटी पंक्तियों के छन्द अनेक कविताओं में तथा दो बड़ी–बड़ी पंक्तियों के, चार, पाँच, छः और आठ बड़ी–बड़ी पंक्तियों के छन्द भी अनेक कविताओं में प्रयुक्त हुए हैं। इन छन्दों का स्वरूप दोहा, चौपाई, सोरठा, गीतिका, हरिगीतिका, रोला, छप्पय, शिखरिणी, मालिनी आदि– शास्त्रीय छन्दों के आस–पास का ही ठहरता है। सूक्ष्म अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए छोटी पंक्तियों के छोटे छन्द तथा व्यापक और उदात संवेदनाओं के लिए लम्बी पंक्तियों के बड़े छन्दों का प्रयोग भी किया गया है। इधर, तुकान्त छन्दों के प्रयोग से कवि का कथ्य अधिक सशक्त और प्रभावोत्पादक हुआ है। छन्दों में लय और संगीतात्मकता होने के कारण उसके काव्य का स्वरूप अधिक मोहक, मनोज्ञ तथा प्रभविष्णु हो उठा है। उनकी छन्द–योजना में भावों की अन्विति का विशेष गुण है। कविता के विभिन्न सभी छन्द उसके मूल केन्द्रिय भाव को संपुष्ट करते हुए पूर्ण रसात्मकता का बोध कराते हैं जिससे कथ्य अधिक प्रभावी और हृदयग्राही बन गया है।"* [10]

मुक्त छन्द में भी कवि लय और प्रवाह के प्रति तो पूर्ण सजग रहा है ही उनमें सारल्यता का समावेश मिलता है–

"ताड़, खजूर, पौधे, तृण –
चले जा रहे हैं धरती से आकाश की ओर,
सृष्टि में कब न रहे
दलबदलु।" [2]

'तरुण' के काव्य में संक्षिप्तता, सुगठितता, सरलता और माधुर्य जैसे गुण सहज ही आ गये हैं कुछ छन्दो के नमूने यहाँ प्रस्तुत हैं–

क *"माटी का दीपक दे–*
तुम तो निश्चिन्त हुए,
यों न करो!" [3]

ख. *"माँ के सँग स्वर्गगंगा के तट*
प्रायः तुम आती होगी,
भैया को जलती नगरी में
देख, लौट जाती होगी।" [4]

'तरुण' के बडे छन्दों को उनकी 'शक्ति का सौन्दर्य–स्वप्न', 'मातृभूमि के श्री–चरणों पर', 'दीप के तले छिद्र', 'प्रकृति की गोद में', 'संसार', 'गॉव की सॉझ', 'सावन', 'बसन्त' और 'रक्षाबन्धन' इत्यादि कविताओं में देखा जा सकता है। यहाँ कुछ उदाहरण

1 'हम शिल्पी सन्त्रास के' 'मखमली थैला', पृष्ठ 50
2 'आँधी और चाँदनी' 'दलबदलू', पृष्ठ 19
3 वही, 'ज्योतिर्मय को', पृष्ठ 24
4 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'बडी बहिन प्यारी 'गुलाब' की स्मृति में', पृष्ठ 304

प्रस्तुत है–

क. *"नीले अम्बर के नीचे इस नीले प्रसार पर से अथाह–*
किस स्वप्न–देश को जाती है तेरी रहस्यमय गूढ़ राह?
अपने अथाह अन्तस्तल में शत कोटि छिपा धूमिल रहस्य–
सपनों का–सा आवरण ओढ़ तुम लपक रहे किस पथ अवश्य?" [1]

ख. *"कच्चे श्री–फल के अन्तर–सा धवल हुआ सम्पूर्ण गगन,*
भाल चूमता डोल रहा है तरुओं का सुकुमार पवन,
व्योम शान्त है, धरा शान्त है, सकल दिशाएँ मौन हुईं,
और हृदय में मधुर व्यथा का भरा हुआ अतुलित स्पंदन।" [2]

ग. *"उधर न जाना हाय, भूलकर वहाँ सीकचों में है कारा!"*
जहाँ तपस्वी देते आए अर्घ्यदान दे तन–मन सारा!
हा! अतीत की सोई आत्माओं ने यों ही सदा पुकारा–
कब चमकेगा भारत बनकर विश्व गगन में मंगल–तारा।" [3]

"मुक्त छन्दों में लय और प्रवाह के साथ–साथ तुक के अतिरिक्त–संयोजन से 'तरुण' की मुक्त कविताओं को कलात्मकता के नये आयाम प्राप्त होते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि तुकान्त और अतुकान्त– दोनों प्रकार के छन्दों के निर्माण में असाधारण सफलता प्राप्त हुई है। उनमें गति और लय का निरन्तर निर्वाह हुआ है। छन्दों का निर्माण सर्वथा भावों के अनुरूप हुआ है। 'तरुण' की छन्द–योजना में भावों की अनिवति का विशेष गुण विद्यमान है।" [11]

अलंकार सौन्दर्य

भावो का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप, गुण और क्रिया को अधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी–कभी सहायक होने वाली युक्ति अलंकार है। काव्य में ऐसे अलंकारों का नियोजन होना चाहिए, जो काव्यरस, उसकी सम्प्रेषणीयता को बाधित कर, उसकी निरन्तरता को अक्षुण्ण रूप से बनाए रखें। 'तरुण' की रचनाओं में अलंकारों का प्रयोग (प्रयास) अनायास ही हुआ है। शब्दालंकारों का प्रयोग बहुत कम है। नाद–सौन्दर्य के लिए अनुप्रास–योजना को ही शब्दालंकार प्रयोग का सर्वस्व कहा जा सकता है। कवि 'तरुण' के काव्य में सादृश्यमूलक अलंकारों का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा उनके काव्य में बहुतायत से अपने प्रकृत रूप में उपस्थित हुए हैं–

"वैसे ही, जैसे–
सजल– पलक कँटीली स्मृतियों में उलझे
मेरे निविड़ मन में
अटकी हो– मेरे बेटे अमित की याद!" [4]

'प्रथम किरण' और 'हिमांचला' मे सादृश्य–योजना के लिए परम्परागत उपमानो का चयन है, किन्तु 'आँधी और चाँदनी' मे अनेक नये उपमान मिलते है। आधुनिक समाज मे व्याप्त विसगतिपूर्ण स्थिति को उजागर करने के लिए अँगूठी का प्रस्तुत

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'शक्ति का सौन्दर्य–स्वप्न', पृष्ठ 202
2 वही, एकान्त क्षणो मे, पृष्ठ 147
3 वही, 'दसन्त', पृष्ठ 344
4 'हम शिल्पी सन्त्रास के' 'स्मृति का गुलाब', पृष्ठ 125

उपमान नया ही नहीं, अत्यन्त उपयुक्त भी है–

"अपने देश ने भी एक अँगूठी पहन रखी है–
सोने के रोलिंग पल्लू पर दोनों ओर बारीक काम हैं,
एक ओर–ऊँचे भवन, कारें, रोशनियाँ, डिनर, कैबरे–
जगमग, जगमग, जगमग।
दूसरी ओर लाठी, गोली, अश्रु–गैस–
कुत्ते के कान से मुड़े, राशन–कार्ड;
और थके पग–डगमग, डगमग, डगमग।" [1]

कवि 'तरुण' के काव्य मे अनेक नये व समकालीन जीवन को अभिव्यक्त करने में पूर्णतः समर्थ उपमान प्रयुक्त हुए हैं। समकालीन मानव स्वयं को निरर्थक समझता है, क्योंकि सामाजिक और राजनैतिक छल–छम ने उसे बौना और पंगु बना दिया है। उसकी इस मनोदशा का चित्र अंकित करने के लिए कवि ने छिपकली के साथ उसकी तुलना की है–

"छिपकली – कितनी शानदार–
मौन, प्रशान्त ध्यानावस्थित,
नई दुलहिन के समान,
लज्जालु।
कोमल–मुलायम गुदगुदे–खुरदरे रबड़–पैड से पाँव बढ़ाती।" [2]

समकालीन कविता में पौराणिक सन्दर्भो का प्रयोग नवीन जीवन की जटिलताओं के परिप्रेक्ष्य मे कर उसे अधिक प्रभावोत्पादक बनाया गया है। 'तरुण' ने पौराणिक सन्दर्भो का अपने काव्य में प्रयोग मानव–मन की जटिलताओं को अभिव्यक्ति देने के लिए किया है। इस प्रकार पौराणिक उपमान की नवीन अर्थवत्ता स्वीकार की गई है–

"दुर्ग–तोरण के
लौह– कीलों से भी जो रहे सरासर अनविद्ध
शराब–पिये युद्धोन्मत हाथियों के अंग व चर्म से भी अधिक
आदमी के तन, मन और प्राण हो गये हैं अब
दृढ़ और सिद्ध।" [3]

'तरुण' के काव्य मे आधुनिक और यान्त्रिक जीवन के उपमानो को भावप्रबलता व जीवन की विसगतियों के अभिव्यंजन मिलते है। इन पक्तियो में कवि ने इसी स्थिति को व्यक्त किया है और उपमानों की झड़ी लगा दी है–

"हर तरह से:
जैसे प्लास्टर हड्डी–टूटे शरीर के अंग से फिट हो जाता है,
जैसे फाउंटेन पैन कैप की चूड़ियों के सहारे फिट हो जाता है,
जैसे साइकल के पहिये से वाल–ट्यूब।" [4]

उपमा, अनुप्रास, पुनरुक्ति अलंकार काव्य के सौन्दर्य को बढा ही नहीं देते अपितु उसमें ध्वन्यात्मकता और माधुर्य के

1 'आँधी और चाँदनी' : 'स्वतन्त्रता की रजत जयन्ती', पृष्ठ 76
2 'हम शिल्पी संत्रास के' : 'एकेडेमिक', पृष्ठ 26.
3 वही, 'कोकीन का इजेक्शन', पृष्ठ 38
4 वही, 'तो फिर मैंने यो किया', पृष्ठ 57.

साथ–साथ गीतिमयता का भी समावेश कर देते हैं। 'निर्जन तट' कविता मे इनकी छटा एक साथ ही दिखाई पड़ी है–

"ठण्डी रात ! बैलगाड़ी सी–
चली जा रही पथ निर्जन,
बैलों की घंटी से कढ़ता–
जाता स्वर टुन्,टुन्, टिन, टुन, टन।" [1]

उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकार जब प्राकृतिक उपमानों के साथ काव्य में समाविष्ट होते हैं तो काव्य की प्रेषणीयता, संगीतात्मकता, प्रभावोत्पादकता मिलती है, कविता सुपाठ्य और सरल भी हो जाती है। समकालीनता में इस सारल्यता का विशेष आग्रह है, जो कवि 'तरुण' के काव्य में दृष्टिगत होता है–

"मधुमय वासन्ती वैभव से लदा हुआ–सा पुलक रहा मन–
ऊषा–रंजित, विहग–निगुंजित, मलयज–पुलकित ज्यों कदम्ब वन।" [2]

उत्प्रेक्षा, रूपक, अनुप्रास, उपमा का सगम काव्य की अभिव्यक्ति को सौन्दर्य से प्रदीप्त कर देता है–

"जग है यह भादों की रजनी,
प्रिय तेरे केशों– सी सुन्दर!
पथ के कुश–कंटक तो हैं ये–
मृदु रोमांच हमारे तन पर।" [3]

"जीवन मेरा तप्त लोहे की तरल तरंगित धार–सा" इसी प्रकार कवि ने अपने जीवन की निरर्थकता को रेखांकित करते हुए जीवन का जो उपमान प्रयुक्त किया है, उसकी निर्मिति मे अद्भुत उद्भावना–शक्ति का परिचय दिया है–

"जीवन ऐसा आसान नहीं;
केवल अलियों का गान नहीं,
यह अर्धनिशा के चातक का, सावन के मरु में व्यर्थ रुदन।" [4]

रूपक अलंकार काव्य मे सदा–सर्वदा से अनिवार्यता के रूप मे उपस्थित रहा है। रूपक काव्य में भाव–साम्य, रूप, विचार–साम्य के आधार पर प्रस्तुत किए जाते हैं, और उसके माध्यम से कवि अपनी कल्पना का वैभव भी प्रदर्शित करने में सफल होता है–

"उधर, अस्त हो गया दिवाकर,
इधर, प्रकट हो रहा चन्द्रमा,
ज्यों जग–शिशु को पिला एक स्तन–
खोल रही दूसरा, प्रकृति माँ।" [5]

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कवि 'तरुण' अलंकारो को साधन मानते है, साध्य नहीं। उनके काव्य में अलंकारो का प्रयोग प्रसंगानुरूप हुआ है और वह काव्य की प्रेषणीयता मे प्रभविष्णुता लाने के लिए हुआ है। अलकार–प्रयोग चमत्कार, क्रत्रिमता के लिए न होकर अनुभूति को सत्यता और प्रभावोत्पादक ढंग से अभिव्यक्त करने के लिए ही हुआ है।

---

1 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'निर्जन तट', पृष्ठ 221
2 'हिमाचला' 'नवचेतना', पृष्ठ 11
3 'ऑधी और चॉदनी' 'तूफानी जीवन–सागर में', पृष्ठ 111
4 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' 'तुमने न अभी देखा जीवन', पृष्ठ 110
5 'हिमाचला' 'हिमाचला', पृष्ठ 9

बिम्ब–विधान

काव्य–शिल्प में बिम्ब को अत्यन्त प्रभावी माना गया है। क्योंकि कवि बिम्बों के माध्यम से काव्य की वर्ण्य वस्तु को मूर्त रूप देते हैं, वहीं उसे भावपूर्ण बनाकर सहृदय के अधिक समीप प्रतिष्ठित कर देते है। कवि 'तरुण' का काव्य चित्र–प्रधान है, उनका आदर्श चित्र–कला है, उनके काव्य मे सभी प्रकार के बिम्ब उपलब्ध होते हैं। चाक्षुष और श्रव्य बिम्बों की उनके काव्य मे अग्रगण्यता है। उनके विम्ब हमारी इन्द्रियो की भूख ही शामित नही करते, अपितु भावोद्रक भी जगाते हैं, क्योंकि उनके मूल मे भावों की प्रेरणा रहती हैं–

"सर्दाये नवम्बर की संझा का
ढीला– पीला
करुण – करुण
अनमना सूरज
उदास कुंजों में ढला जा रहा है।" [1]

डॉ0 'तरुण' के काव्य मे बिम्बो का प्रयोग किसी आग्रह या मोह से प्रेरित नही, वरन् मूल सवेदना की अभिव्यक्ति को तीव्र बनाने के लिए हुआ है। अँधेरा और उसमे कुछ खोजती–भटकती दृष्टि को जल–भरे हौज में क्रीडा करती किशोरियों के बिम्ब से अभिव्यजित किया गया है। यह बिम्ब चाक्षुक बिम्ब के गुणों एवं प्रभाव दोनों ही प्रकार से प्रशंसनीय है–

"यह अँधेरा है बड़ा विश्रामदायक
ग्रीष्म की विश्रान्त सन्ध्या में भरे जल–हौज–सा
जिसमें कि मेरी दृष्टियों की चपल चारू किशोरियाँ
निर्बन्ध होकर कूदती हैं, तैरती हैं और नीर उछालती हैं।" [2]

चित्रात्मकता और ध्वन्यात्मकता का सम्मिश्रण काव्य में भाषाभिव्यक्ति को अधिक तीव्र, प्रेषणीय और प्रभावोत्पादक ढंग से अभिव्यक्त करने मे समर्थ रहता है। कवि 'तरुण' ने शब्द–चयन, शब्द–मैत्री के माध्यम से इस प्रकार का सम्मिश्रण किया है–

"खरखराते पात वाले
बाँसों की डालों में फुदकते फिर रहे हैं पँखेरू!
ताँबे–सोने की साँझ अब होने को है!" [3]

उनके बिम्ब–प्रयोगों में सर्वत्र नवीनता और सूझ की मौलिकता है। यहॉ एक उदाहरण पर्याप्त होगा। महाकवि माघ ने पूर्णिमा के सांयकाल में विन्ध्याचल के पूर्व में उदित चन्द्रमा और पश्चिम मे अस्तगामी सूर्य की हाथी के हौदे से उभयत: लटकते वृत्ताकार दो घंटों के रूप में कल्पना की थी। 'तरुण' ने 'हिमांचला' की एक कविता में प्रकृति की विराटता का बोध कराने के लिए दिवाकर और सुधाकर को प्रकृति–मॉ के दो स्तनों के रूप मे कल्पित करके सर्वथा नवीन सूझ का परिचय दिया है। उक्त सूझ की सार्थकता इस अर्थ मे विशेष महत्त्वपूर्ण है कि मॉ के स्तन पान कराने से और दिवाकर–सुधाकर के रस–वर्षण में शाश्वत कोटि का साधर्म्य है–

"उधर, अस्त हो गया दिवाकर
इधर, प्रकट हो रहा चन्द्रमा,
ज्यों, जग–शिशु को पिला एक स्तन
खोल रही दूसरा, प्रकृति माँ।" [4]

1 'हम शिल्पी सत्रास के' 'राशनकार्ड के साथ वापस', पृष्ठ 9
2 'ऑधी और चॉदनी' 'अँधेरा', पृष्ठ 4
3 'हम शिल्पी सत्रास के' 'सफेद कबूतर मेरे', पृष्ठ 64
4 'हिमाचला' 'हिमाचला', पृष्ठ 9

डॉ0 'तरुण' के गीत उत्कृष्ट भाव–विम्बो की मनोरम माला के रूप मे रचे गये हैं। कवि सन्दर्भ के सहारे सवेदना को लयात्मक रूप मे सम्मूर्त करता है। सवेदना का यह सन्दर्भ–सापेक्ष सम्मूर्तन ही बिम्ब–विधान है। 'तरुण' के काव्य मे कुछ प्रभावशाली बिम्ब प्रस्तुत है–

1. *"मेरी तो छाती है पत्थर–*
जिसके समतल पक्के पथ पर,
अब तक कितने ही निकल चुके,
विकराल प्रलय–रथ के पहिये,
यह जान सकेगा कौन कभी।" [1]

2. *"तैरा इन्हें, हटा आँचल–पट–*
छोड़ चलूँगा मैं तो यह तट!
हिचकोले खाते डोलेंगे, जल पर भरमाये–भरमाये!
मैंने गीत–प्रदीप जलाये।" [2]

3. *"हम एक डाल पर रह लेते,*
आँधी–पानी सब सह लेते!
खिल साथ, पहुँचकर पूजा में चुपचाप विसर्जन हो जाता!
तुम मेरे साथी होते तो–" [3]

4. *"श्यामा–चौड़े और रसीले नयनों को फैलाये*
खड़ी जोहती बाट, वन्य कुसुमों से अलक सजाये!
सिन्धु और आकाश सदृश, सम्मुख खोले चौड़े मन–
सिन्धु–तरंगों–से बल खाते, उमड़ाते आलिंगन!
महाजागरण होता मेरा, जाग्रत जग यह सोता!
मैं बनवासी होता!" [4]

डॉ0 रामकुमार शर्मा के अनुसार, ***"मौलिकता और सजीवता उनके काव्य–बिम्बों की शक्ति तथा भावों की विषयनुकूलता और सघनता उनका विशेष गुण है। उनका बिम्ब–विधान अत्यन्त समृद्ध, कलापूर्ण, वैविध्य–युक्त होने के साथ–साथ सूक्ष्म से सूक्ष्म संवेदनाओं को सहज ही संवेद्यता और प्रांजलता प्रदान करता है। 'प्रसाद', 'निराला', 'अज्ञेय' और 'मुक्तिबोध' के बिम्बों की भाँति 'तरुण' के काव्य में अनेक विराट और मनोज्ञ काव्य–बिम्ब उपलब्ध होते हैं जो कवि की नैसर्गिक काव्य–चेतना तथा प्रकृत काव्य–प्रतिभा के परिचायक है।"*** [12]

प्रतीक विधान

प्रतीक, काव्य मे भावो की तीव्रता और अकथनीय भावों की अभिव्यक्ति के लिए उपयोग में लाए जाते है। कवि 'तरुण' ने अपने काव्य मे प्रतीको का चयन सामान्य जीवन से किया है, इसके साथ–साथ इन्होंने स्पष्ट, सरल और प्रभावोत्पादक प्रतीको का उपयोग अपने काव्य मे किया है। कवि 'तरुण' अपनी भावुकता को भी प्रतीकों की सारल्यता के साथ अभिव्यक्त करते है–

1 ऑधी और चॉदनी' 'कौन–कभी', पृष्ठ 80
2 वही गीत–प्रदीप जलाये, पृष्ठ 100
3 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली 'तुम मेरे साथी होते तो', पृष्ठ 283
4 हम शिल्पी सन्यास के 'मै बनवासी होता', पृष्ठ 70

"हम तो हैं प्रतिनिधि–
नाजुक, विश्वासमयी, भीनी–भीनी महकती
शीतल दूब के,
सरल, अल्हड़, लय–प्राण मुक्त लहर के!
हम नहीं है प्रतिनिधि–
जड़ाऊ, खोखले, तामझामी विराट आकाश के।" [1]

समकालीन जीवन की विद्रूपताओ, विषमताओ, विसंगतियो का अकन करने के लिए कवि 'तरुण' ने उनके अनुरूप ही इनके मध्य से नवीन प्रतीकों का चयन किया है–

"अनजाने में न जाने, कितने नकाबदार चेहरे
'कैच' कर लिए गये हैं इसमें आज तक–
अपने लैंस में–
क्लिक, क्लिक!
व्हाइट कॉलर्स इसमें आते हैं–
कौए की चोंच जैसे–
'क्लिक'।" [2]

'अँधेरा' जो सदा से दु.ख, पीडा का प्रतीक माना जाता रहा है, उसको कवि ने नवीन अर्थ में प्रयुक्त करते हुए प्रसन्नता व सुख–दान करने वाला स्पष्ट किया है–

"यह अँधेरा है– कि जिससे
विश्व के सब प्राणियों की आँख–
मुफ़्त की सम्पत्ति जैसी–
नींद के भरे–भर घड़े
हर रात ले जाती सुडौल,
बड़े–बड़े!" [3]

कवि ने समकालीन असमताओं, औपचारिकताओ, दब्बूपन का व्यजन प्रतीकात्मक शब्दों मे भरने के लिए आकाश को 'बॉस' व समुद्र को उसके अधीनस्थ कर्मचारी का प्रतीक स्वीकार किया है–

"खोखले, जड़ाऊ आसमान के चरणों में
लहराता–पसरता–हहरता,
धीर गम्भीर संयत स्वर में
अदब के साथ
मुंडी हिला–हिला कर
कह रहा है–
यस सर! यस सर! ....” [4]

1 हम शिल्पी सत्रास के' प्रतिनिधि', पृष्ठ 81
2 ऑधी और चॉदनी' 'क्लिक', पृष्ठ 17
3 वही, 'अँधेरा', पृष्ठ 6
4 'हम शिल्पी सत्रास के' 'यस सर', पृष्ठ 20

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कवि 'तरुण' ने अपने काव्य मे समकालीन सन्दर्भों के अनुकूल समकालीन जीवन के उन प्रतीकों का प्रयोग किया है, जो उसकी सभी समताओं–विषमताओ को व्यक्त करने मे पूर्ण रूप से सफल है। उनके प्रतीको की सरलता और स्पष्टता भी उनके समकालीन शिल्पगत सन्दर्भों को अपनाने की ओर ही इंगित हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह कहा जा सकता है कि 'तरुण' के गीत अनुभूति की सद्यता और सघनता तथा शिल्प की दृष्टि से आधुनिक हिन्दी गीतकाव्य मे निश्चय ही अप्रतिम और बेजोड है। गीतिमयता तो कवि 'तरुण' के काव्य का प्राण ही है। मुक्त छन्द जीवन की अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त है। प्रतीकों और अलंकारों का कवि 'तरुण' के काव्य में सरलता व स्वाभाविकता के साथ प्रयोग हुआ है। चित्रात्मकता व बिम्वात्मकता भी सफल रही है। 'तरुण' ने जीवन में जो देखा, भोगा, परखा उसी अनुभूति को सरलता व स्पष्टता से अभिव्यक्त किया है। समग्र रूप में उनकी नैसर्गिक काव्य–प्रतिभा के कारण भाषा, शब्द, छन्द, अलंकार, ध्वनि, बिम्ब, प्रतीक और गीतिमयता आदि–शिल्प के विभिन्न उपादानो पर कवि का असाधारण अधिकार है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 डॉ0 रामेश्वर लाल खण्डेलवाल 'तरुण' 'जयशकर प्रसाद वस्तु और कला', पृष्ठ 324
2 डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक 'तरुण–काव्य ग्रन्थावली' की 'भूमिका' के पृष्ठ 8 से
3 (स0) डॉ0 हरिश्चन्द्र वर्मा 'डॉ0 'तरुण' का काव्य–ससार', पृष्ठ 82–83
4 डॉ0 रामेश्वर लाल खण्डेलवाल 'तरुण' 'जयशकर प्रसाद वस्तु और कला', पृष्ठ 324
5 (स0) डॉ0 ओमानन्द रू0 सारस्वत 'कविवर 'तरुण' सर्जन के चरण', पृष्ठ 114
6 (स0) डॉ0 ओमानन्द रू0 सारस्वत 'कविवर 'तरुण' सर्जन के चरण', पृष्ठ 155
7 (स0) डॉ0 हरिश्चन्द्र वर्मा 'डॉ0 'तरुण' का काव्य–ससार', पृष्ठ 62
8 (स0) डॉ0 हरिश्चन्द्र वर्मा 'डॉ0 'तरुण' का काव्य–ससार', पृष्ठ 133–134
9 (स0) डॉ0 ओमानन्द रू0 सारस्वत 'कविवर 'तरुण' सर्जन के चरण', पृष्ठ 156
10 डॉ0 रामकुमार शर्मा 'तरुण' काव्य मे प्रेम और सौन्दर्य' पृष्ठ 122
11 डॉ0 रामकुमार शर्मा तरुण' काव्य मे प्रेम और सौन्दर्य' पृष्ठ 125
12 डॉ0 रामकुमार शर्मा तरुण' काव्य मे प्रेम और सौन्दर्य', पृष्ठ 126